विपश्यना

साधकों का
मासिक प्रेरणा पत्र

बुद्धवर्ष २५३१ | श्रावण पूर्णिमा | ९ अगस्त १९८७ | वर्ष १७ | अंक २

धम्म वाणी

यथा पि कुम्भकारस्स कतं मत्तिकभाजनं ।
खुद्दकञ्च महन्तञ्च यं पक्कं यञ्च आमकं ।
सब्बं भेदनपरियन्तं एवं मच्चान जीवितं ॥

—विसुद्धिमग्ग—८/७.

जैसे कुम्हार के बनाए सभी मिट्टी के भाजन छोटे हों या बड़े, पक्के हों या कच्चे, फूटकर नष्ट ही होनेवाले होते हैं; ऐसे ही प्राणियों के जीवन भी ।

मृतक - मंगल

जन्मना और मरना, मरना और जन्मना; इस जन्म-मरण के चक्कर में सारे प्राणी पिसते जा रहें हैं । जो जन्मता है उसे जरा, व्याधि में से गुजरते हुए मृत्यु का शिकार बनना ही पड़ता है । और जब तक जीवन-मुक्त अर्हंत न बन जाय तब तक हर मृत्यु फिर एक नए जन्म का कारण बनती है । जन्म इस लोक में हो या किसी अन्य लोक में, पर लोकचक्र चलता ही रहता है । जन्म, जरा, व्याधि, मृत्यु । जन्म, जरा, व्याधि, मृत्यु । यह दुःखचक्र चलता ही रहता है ।

कोई विपश्यी साधक विपश्यना द्वारा राग, द्वेष और मोह की जकड़न ढीली करने लगता है तो उसका भवचक्र दुर्बल होने लगता है । लेकिन सारे कर्म-कषायों की, आस्रवों की निर्जरा हुए बिना पूर्णतया मुक्त नहीं हो पाता । यद्यपि मुक्ति के मार्ग पर आगे बढ़ता जाता है परन्तु जब तक लक्ष्य नहीं प्राप्त हो जाता मृत्यु भी होती है, फिर जन्म भी होता है ।

अभी पिछले दिनों चार गंभीर विपश्यी साधकों की मृत्यु की सूचना मिली । उनकी सद्गति की पूर्ण आशा की जा सकती है । परन्तु यह प्रश्न उठते रहते हैं कि प्रिय की मृत्यु पर परिवार के अन्य सदस्यों का क्या कर्तव्य है ?

जिन्होने धर्म की साधना बिल्कुल न की हो उनके लिए तो यह बड़े दुःख का अवसर होता है । "पियेहि विप्पयोगो दुक्खो"—प्रिय का वियोग बड़ा दुखदायी होता है । अतः सारे परिवार में रोदन क्रन्दन का माहौल बन जाता है । अनेक दिनों तक शोक का वातावरण बनाए रखना आवश्यक समझा जाता है । सगे-संबंधी, मित्रबन्धु सान्त्वना देने के बहाने इकट्ठे होते हैं परन्तु अधिकतर परिवारवालों के शोकपरिदेव को बढ़ाते रहने का का ही काम करते हैं । कहीं कहीं तो शोक का वातावरण बनाए रखने के लिए भाड़े की रोनेवालियाँ भी बुलाई जाती हैं । यह अतियों का एक ऐसा मार्ग है जिससे विपश्यी साधकों को बिल्कुल बचना चाहिए । अपने परिवार के वातावरण को मायूसी के माहौल से बचाना चाहिए ।

दूसरी ओर कुछ एक पूर्वी देशों में किसी की मृत्यु हो जाने पर घर के माहौल को मायूसी से बचाए रखने के लिए कई दिनों तक समाज के लोग उस घर में एकत्र होकर झांझ-मजीरे बजाते हैं, राग-रंग का वातावरण पैदा करते हैं । कहीं कहीं बात इस कदर बिगड़ गयी है कि मृतक का घर कुछ दिनों के लिए ताश-पत्ते के जुए का अड्डा बन जाता है । रात-दिन नशे-पते के दौर चलने लगते हैं । यह दूसरी हानिकारक अति है जिससे विपश्यी साधक को बचना चाहिए ।

तो विपश्यी साधक ऐसी अवस्था में क्या करे ?

सही मध्यम मार्ग अपनाए । बाहर घर के और भीतर अपने अन्दर के वातावरण को धर्ममय बनाए रखने के लिए समय समय पर सामूहिक तथा व्यक्तिगत साधना करे ।

एक साधना है मरणानुस्मृति । बार बार मृत्यु की स्मृति बनाए रखने की साधना । मृतक की स्मृति नहीं, मृत्यु की स्मृति । मानों मृतक के माध्यम से मृत्युराज ने संदेश भेजा है कि हमारी मृत्यु भी न जाने कब हो जाय । मृत्यु तो अवश्यंभावी है । और कुछ टल भी सके पर मृत्यु नहीं टल सकती । देर-सवेर आने ही वाली है । कब आ जाय, यह भी निश्चित नहीं । अतः मरणानुस्मृति की साधना करता हुआ साधक यह चिंतन मनन करे कि " मुझे भी हर समय जाने की तैयारी रखनी चाहिए । मैं अपनी विपश्यना का अभ्यास मन्द न पड़ने दूं ताकि जब कभी मृत्यु आए, वियश्यना के होश में ही देह त्यागूं, जिससे कि अगला जीवन भी धर्ममय, विपश्यनामय ही मिले । यों भवचक्र की धुरी दुर्बल होते होते समय पाकर टूट ही जाय । पर यह तभी होगा जबकि अपनी साधना को दिनों दिन पुष्ट करता जाऊंगा ।

किसी की भी मृत्यु हमारे भीतर ज्ञान जगावे, पर यह श्मशान ज्ञान बनकर न रह जाय । सचमुच धर्म संवेग जागे । इसीलिए ऐसे अवसर पर बार बार मरणानुस्मृति की साधना करनी चाहिए । समस्त शरीर और चित्तस्कंध कितना नश्वर है, कितना भंगुर है, किस प्रकार प्रतिक्षण उत्पाद-व्यय स्वभाववाला है । शरीर और चित्त के संसर्ग से यह जीवनधारा चल रही है । किसी भी क्षण

यह संसर्ग टूट सकता है और मृत्यु आ सकती है। ध्यान रहे मृत्यु आने का किंचित भी भय मन में न जागे, बल्कि मृत्यु की तैयारी की उमंग जागे। न जाने कितने जीवनों में किस किस प्रकार की मृत्यु आयी। परन्तु इस बार तो मनुष्य-जीवन मिला है और मनुष्य-जीवन में भी विपश्यना की कल्याणकारिणी, मुक्तिदायिनी साधना मिली है। इसे पुष्ट करके इस बार की मृत्यु को अधिक कल्याणकारिणी बनायेंगे। अंतिम साँस विपश्यना के अनित्य बोध में ही छोड़ेंगे। यह निश्चय दृढ़ होता जाय और इस निश्चय को सफलीभूत बनाने के लिए दैनिक विपश्यना साधना अधिक समय तक और अधिक गंभीरतापूर्वक करने लगें। गृहस्थ जीवन की अत्यंत अनिवार्य जिम्मेदारियों को निभाने के लिए जितना समय लगाना पड़े वह तो अवश्य लगाएँ, लेकिन बाकी बचा हुआ सारा समय विपश्यना की पुष्टि में ही लगे, मंगलमृत्यु की तैयारी में ही लगे। आलस में, प्रमाद में, निकम्मे वाद-विवाद में, निरर्थक गप्पों में जरा भी समय न जाने दें। जीवन के जितने दिन बचे हैं उनका सदुपयोग हो। वर्तमान भी सुधरे और भविष्य भी सुधरे। लोक भी सुधरे और परलोक भी सुधरे।

यह तो हुई अपने भले के लिए प्रेरणाजनक साधना। पर परिवार का विपश्यी सदस्य मृतक के लिए क्या करे ?

मृतक के लिए भी साधना ही करे। विपश्यना की हर बैठक के बाद मन ही मन मृतक को याद करे और संकल्प करे कि मेरी इस साधना के पुण्य में आप भी भागीदार हों। मृतक का इस पुण्य-वितरण से बढ़कर और कोई कल्याणकारी श्राद्ध हो नहीं सकता।

विपश्यना की हर बैठक के बाद जब मंगल मैत्री का अभ्यास करे तो सभी प्राणियों की मंगल कामना के साथ साथ मृतक को याद कर उसके प्रति विशेष मंगल भावना करे। व्यक्तिगत मंगल-कामना करे— "तुम इस समय जहाँ हो, जिस अवस्था में हो, जिस लोक में हो, जिस योनि में हो– तुम्हारा मंगल हो! तुम्हारा कल्याण हो! तुम्हारी स्वस्तिमुक्ति हो! तुम धर्म के पथ पर आगे बढ़कर भवचक्र से शीघ्र छुटकारा पाओ!"

विपश्यना साधना द्वारा चित्त को यथासंभव शांत, स्थिर और निर्मल करके जो मंगल मैत्री की जाती है वह बड़ी बलशालिनी होती है, प्रभावशालिनी होती है, कल्याणकारिणी होती है। निर्मल चित्त के कारण मैत्री करते समय जो पुलक-रोमांच होता है उससे मैत्री की तरंगें तीव्र हो जाती हैं और मृतक व्यक्ति जहाँ कहीं हो, जिस किसी अवस्था में हो, इन तरंगो के संपर्क से पुलकित हो उठता है। आह्लाद-प्रह्लाह से भर उठता है। यह संभव है कि उसे अपने पूर्व जीवन की रंचमात्र भी स्मृति न हो और वह यह भी न जाने कि कोई उसे मैत्री भेज रहा है, पर फिर भी प्रभावित होता है और लाभान्वित होता है। भले कुछ समय के लिए ही सही, वह प्रसन्नचित्त हो उठता है। धर्मपथ की ओर आकर्षित होता है। ऐसी मैत्री बड़ी सार्थक होती है, सुफलदायिनी होती है।

इसके विपरीत यदि कोई साधक जब कभी अपने प्रिय मृतक की याद कर दुखी होता है, व्याकुल होता है तो वह व्याकुलता की तरंगें बड़ी अनर्थकारिणी होती हैं। मृतक जहाँ कहीं हो, जिस किसी अवस्था में हो, ये तरंगें जब उसे छूती हैं तो वह बेचैन हो उठता है। वह जानता भी नहीं ऐसा क्यों हो रहा है ? पर दुखियारा तो हो ही जाता है।

साधक यह तो चाहता ही है कि मेरा प्रिय गया सो तो गया, पर वह जहाँ कहीं भी हो सुखी रहे, शांत रहे, मंगललाभी रहे, धर्मलाभी रहे। ऐसा चाहते हुए भी अपनी नासमझी के कारण करता यह है कि अपने प्रिय को व्याकुल, बेचैन, अशांत बनाता है। अतः विपश्यी साधक यह होश रखे कि जब जब उसे प्रिय की याद आए, मैत्री ही जागे। भूलकर भी विषाद न जगने पाए, विलाप न जगने पाए।

हर व्यक्ति अपने अनुभवों से देखता है कि कभी कभी बिना किसी स्पष्ट कारण के ही मन में उदासी भरी जा रही है, विषाद उमड़ रहा है, निराशा छा रही है, सब कुछ बड़ा अप्रिय लग रहा है। और इसी प्रकार कभी कभी बिना ही किसी स्पष्ट कारण के मन में उमंग उल्लास जाग रहा है, बड़ी प्रसन्नता जाग रही है, सब कुछ बड़ा प्रिय लग रहा है। सामान्य साधक तो नहीं परन्तु जरा पका हुवा साधक होता है तो बखूबी पहचानता है कि यह बाहर की तरंगें हैं जो कि मुझे प्रभावित कर रही हैं। प्राणि जैसे अपनी तरंगों से वातावरण को कमोवेश प्रभावित करता है वैसे ही स्वयं भी वातावरण की तरंगों से कमोवेश प्रभावित होते रहता है। यह कुदरत का नियम है। साधक इस नियम को खूब समझता रहे कि जब जब मैं अपने प्रिय मृतक को याद कर विकल चित्त से दुख की तरंगों का प्रजनन करता हूँ तो वह उन तरंगों से प्रभावित होकर दुखी हो उठता है। इसके विपरीत जब जब उसे याद कर प्रसन्न चित्त से मंगल मैत्री की तरंगें पैदा करता है तो वह हर्ष की तरंगों से प्रभावित होकर पुलकित हो उठता है।

प्रिय मृतक को याद कर जब जब मन व्याकुल होने लगे तो साधक तुरंत योनिसोमनसिकार शुरू कर दे याने सम्यक् चिंतन मनन शुरू कर दे– "क्या मैं अपने प्रिय मृतक के लिए रो रहा हूँ ? यदि हाँ तो क्यों भला ? क्या मैं निस्संदेहरूप से जान गया हूँ कि मृतक की अधोगति ही हुई है ? यदि नहीं तो संभावना इस बात की अधिक है कि मृतक विपश्यी होने के कारण उसकी सद्-गति ही हुई है। ऐसी अवस्था में उसका मरण उसके लिए उन्नति का कारण हुआ, अवनति का नहीं। उसकी उन्नति में मैं भला दुख क्यों मनाऊँ ?" और सम्यक् चिंतन द्वारा साधक के यह समझ में आ जाय कि मैं मृतक के लिए नहीं रो रहा हूँ। मैंने उसके प्रति जो आसक्ति पैदा करी थी उसके कारण विछोह के दुख से रो रहा हूँ तो विपश्यना साधना अधिक कर के अपने इस विलाप के आसक्ति-वाले कारण को दूर करे। धरमबोधि जगावे और मन को शांत करे। अगर वह सचमुच मुझे प्रिय है तो विलाप करके अपने प्रिय को दुखी नहीं बनाना चाहता। मैं उसके सुख का ही कारण बनूं। मैं उसको शांत चित्त से मंगल मैत्री भेजता रहूँ।

कुछ विपश्यी साधक ऐसे भी होंगे जो अभी तक पुनर्जन्म के प्रकृतिजन्य नियम को मानने योग्य नहीं हुए। ऐसे साधक अपने विलाप से मृतक के दुखी होने की बात को न मानें तो भले उसे

छोड़ें। अपने हित-सुख के बारे में ही धर्मचिंतन करें। "मैं मृतक को याद करके दुखी होता हूँ तो अपनी चित्तधारा पर दुख के संस्कारों के बीज बोता हूँ जो कि मुझे इस समय तो दुखी बनाते ही हैं, मेरा भविष्य भी दुखमय बनायेंगे। दुख के बीज दुख का ही फल लायेंगे। वर्तमान भी दुखमय और भविष्य भी दुखमय; वर्तमान भी अंधकारमय और भविष्य भी अंधकारमय ही होगा। अतः दुख के बीज न बोकर चित्त को विपश्यना द्वारा शांत रखते हुए मंगल-मैत्री के बीज बोऊं ताकि वर्तमान भी सुखशांतिमय और भविष्य भी सुखशांतिमय हो, वर्तमान भी प्रकाशमय और भविष्य भी प्रकाशमय हो!"

इसके अतिरिक्त एक बात और समझें। "मैं जब जब विलाप करता हूँ, घर के सारे वातावरण को संताप से भर देता हूँ। घर के सारे लोग संतापित हो उठते हैं। स्वयं भी दुखी बनता हूँ अन्य लोगों को भी दुखी बनाता हूँ। इसके विपरीत विलाप छोड़कर शांत चित्त हो मंगलमैत्री का अभ्यास करता हूँ तो घर का सारा वातावरण सुख-शांतिसे भर उठता है। स्वयं भी सुखी, अन्य लोग भी सुखी।"

सच्चाई यह है कि मन एक प्रजनन यंत्र है जो प्रतिक्षण तरंगें प्रजनन करता रहता है। यदि हम प्रिय मृतक को यादकर विलाप करतें हैं तो दुख-दौर्मनस्य की तरंगें प्रजनन करते हैं जिससे स्वयं भी दुखी होते हैं, परिवार के लोगों को भी दुखी बनाते हैं और अपने प्रिय मृतक को भी दुखी बनाते हैं।

अतः समझदार विपश्यी साधक को चाहिए कि ऐसी अप्रिय स्थिति में चित्त को विपश्यनामय शांति में स्थापित करे और प्रिय मृतक के प्रति मंगल मैत्री की तरंगों का ही प्रजनन करे।

मृतक का मंगल हो! मृतक का मंगल हो! मृतक का मंगल हो!

मंगल मित्र,
स. ना. गो.

देहावसान

हैदराबाद के श्री हीरालाल श्यामजी कापड़िया का गत मास हृदयगति रुक जाने से अवसान हुआ। हैदराबाद में पहली बार शिविर में सम्मिलित होने के पश्चात् से उनके दैनिक व व्यावहारिक जीवन में बड़ा परिवर्तन आ गया था। वे बहुत ही सहनशील और नम्र बन गए थे। पत्नी के साथ नियमित ध्यान करते हुए जीवन के कई उतार-चढ़ावों का सामना बखूबी कर पाए। उनकी प्रेरणा से कई लोग शिविरों में आए। अस्पताल में भी वे साधनामय रहे और मिलनेवालों को विपश्यना की ही प्रेरणा देते रहे। मृत्यु के समय उनकी मनोदशा बहुत साफ एवं शांत रही।

मद्रास के श्री हरिभाई संघवी को हैदराबाद के पहले शिविर में ही बड़ा लाभ मिला और मद्रास लौटकर वहाँ के साधकों से मिलकर "विपश्यना केन्द्र" का कार्यालय अपने व्यापारिक प्रतिष्ठान के कार्यालय में ही खोलकर धर्मसेवा में जुट गए। इस प्रकार मद्रास में पू. गुरूजी तथा कई सहायक आचार्यों के शिविरों का आयोजन हुआ और लोगों को धर्मलाभ मिला। सौभाग्य से पिछले जून महीने में उनकी अस्वस्थ अवस्था के समय पू. गुरूजी भी मद्रास पधारे तो मृत्यु के कुछ दिन पूर्व वे उनके घर गए और उन्हें मंगल मैत्री दी। इससे उन्हें बड़ा बल मिला। मृत्यु के समय और पश्चात् भी उनके चेहरे पर बहुत शांति रही।

बैंगलोर के श्री प्रहलादराय केडिया का भी देहान्त हृदयगति रुकने से हुआ। वे बर्मा में पू. गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन से साधना सीखकर अभ्यास करते रहे थे। बर्मा में कुछ एक शिविरों में बैठने के बाद कुछ वर्षों से बैंगलोर आकर काम-धंधे में लगे थे। पिछले दिसम्बर-जनवरी के विपश्यना सेमिनार/शिविर में सम्मिलित होने के बाद उनकी साधना और भी जीवन्त हो उठी थी। उनके परिवार वालों से मालूम हुआ कि मृत्यु के समय उनका चेहरा बहुत शांत था।

जयपुर की विपश्यी साधिका श्रीमती प्रेमदेवी का प्रातः काल ८ जुलाई को अवसान हुआ। उन्होंने जयपुर में पूज्य गुरुजी के शिविरों में भाग लिया और साधना का अभ्यास करती रहीं। वृद्धा अवस्था में शारीरिक कष्ट के समय साँस को देखने का अभ्यास विशेष रूप से करती थीं। अंतिम समय तक सांस की जानकारी बनी रही। देह च्युति के बाद चेहरे पर अद्भुत चमक एवं सौम्यता देखी गयी।

विपश्यना परिवार इन दिवंगतों के प्रति अपनी मंगल मैत्री प्रेषित करता है।

विश्व के तीन नए विपश्यना केन्द्र

DHAMMA UPAWAN

SAYAJI U BA KHIN VIPASSANA FOUNDATION
P. O. Box. 510, 2535, Marra Road, OCCIDENTAL,
California 95465 U. S. A. Tel. (707)874-3031

धम्मउपवन – अमेरिका के सदाबहार पश्चिमी क्षेत्र कैलीफोर्निया के विख्यात नगर सान फ्रांसिस्को से लगभग डेढ़ घंटे की दूरी पर उत्तर की ओर आक्सीडेंटल के घने प्राकृतिक वनप्रदेश के बीच स्थित सड़क के अंतिम छोर पर बना एक फार्म हाउस। ६ एकड क्षेत्र के घेरे में ६ बड़े कमरों का सभी आवश्यक उपकरणों से सज्जित यह मकान ढाई वर्ष पूर्व "विपश्यना हाऊस" के रूप में किराए पर लिया गया था जिसमें कुछ सुधार करके ४५ साधकों का शिविर लगाने योग्य सुविधा की गई थी। यहाँ अब तक प्रतिवर्ष १०-१२ शिविर सहायक आचार्यों द्वारा संचालित हुए जिनमें औसतन २५/३० लोगों ने धर्मलाभ प्राप्त किया। इस प्रकार साधकों के बढ़ते हुए उत्साह को देखते हुए स्थानीय ट्रस्ट ने इसे खरीद कर स्थाई ध्यान केन्द्र में परिणत कर दिया। पू. गुरूजी का लगभग १५० लोगों के लिए अगला शिविर इसी केन्द्र पर अस्थाई रसोई-घर, शौचालय एवं टेंट्स लगाकर संचालित होगा। शिविर के पूर्व कुछ आवश्यक निर्माणकार्य भी पूरे कर लिए जायेंगे।

DHAMMA GEHA

U. K. VIPASSANA ASSOCIATION
107, Handsworth Wood Road, Handsworth Wood,
BIRMINGHAM U. K. Tel. (021) 5541-153

धम्मगेह/धर्मगृह — लंदन से लगभग ढाई घंटे उत्तर-पश्चिम में स्थित प्राचीन नगर बर्मिंघम में गत वर्ष इंग्लैंड के उत्साही साधकों ने प्रयत्न करके "विपश्यना एसोसिएशन" के माध्यम से एक मकान खरीदा, जिसमें कुछ आवश्यक मरम्मत एवं नवनिर्माण करके अब उसे एक स्थाई केन्द्र का रूप दे दिया है। वर्तमान भवन में लगभग ४५ साधकों का सहायक आचार्यों का शिविर सुचारुरूप से संचालित किया जा सकता है। यहाँ शिविर लगने आरंभ हो गए हैं।

DHAMMA MEDINI
VIPASSANA FOUNDATION CHARITABLE TRUST
R D 3, Burnside Road, Kaukapakapa
New Zealand, Tel. 0880–5319

धम्म मेदिनी — आस्ट्रेलिया के पूर्व में स्थित छोटा सा पर समृद्ध देश न्यूजीलैंड प्राकृतिक सौन्दर्य का अद्भुत नमूना है। यहाँ की राजधानी वेलिंग्टन से लगभग आधे घंटे की दूरी पर कौकापकापा में लगभग १०० एकड़ का एक विशाल भूखंड स्थानीय विपश्यना फाउण्डेशन चेरिटेबल ट्रस्ट ने ध्यानकेन्द्र के लिए खरीद लिया है। फिलहाल इस केन्द्र में कुछ छोटे-मोटे कुटीर ही बने हैं। केन्द्र के उपयुक्त निर्माणकार्य शीघ्र ही आरंभ किया जायेगा।

" विपश्यना शुल्क "

इस समय कागजादि के दाम बहुत बढ़ गए हैं औरे पोस्टेज/डाक-व्यय/ भी ढाई गुना बढ़ गया, इस प्रकार पत्रिका-प्रकाशन बहुत खर्चीला हो गया है। अतः सभी वार्षिक शुल्क दाताओं से अनुरोध है कि वे अपना वार्षिक-शुल्क रु. १०/-अथवा आजीवन शुल्क के रूप में रु. १०० /- यथाशीघ्र भिजवाने की व्यवस्था करेंगे। खर्च बढ़ने के बावजूद भी साधकों की सुविधा के लिए शुल्क वृद्धि नहीं की जा रही है।

शुल्क भेजते समय अपनी कम्प्यूटर ग्राहक-संख्या अवश्य लिखें।

व्यवस्थापक,
पत्रिका-विभाग
विपश्यना विशोधन विन्यास

भुज-कच्छ के श्री प्रेमजी गांगजी सावला एवं श्री मती मधु प्रेमजी सावला को सहायक आचार्य नियुक्त किया गया।

दोहे धरम के

काया चित्त प्रपंच का, मेल न शास्वत होय।
पहले पीछे सब छुटें, साबुत रहे न कोय॥

आगे पीछे सब गए, लिया मौत ने घेर।
जैसे मरुधर की नदी, सूखे देर सबेर॥

जीवन भर बढ़ती रहे, सुखद पुण्य की बेल।
मरणकाल जाग्रत रहे, होय स्वर्ग से मेल॥

मंगल बेला मरण की, उजला होय उजास।
राखे विमल विपश्यना, जाग्रत अंतिम सांस॥

जो मिल जाए धर्म का, विपश्यना आलोक।
कभी लोक बिगड़े नहीं, ना बिगड़े परलोक॥

शाप ताप संताप से, जीवन रहे अशोक।
सुधरे यह भवलोक भी, सुधर जाय परलोक॥

दूहा धरम रा

छोड़ जगत जंजाल नै, होसी कणा नचीत।
छण आतां ही मौत को, जाणो पड़सी मीत॥

यो रोक्यां सूं ना रुकै, र'वै न थ्यावस रंच।
जो आया सो ही गया, इसो जगत परपंच॥

मरणकाल सूं कुण बच्यो, आसी देर सबेर।
चेतो रख रै साधका! मोह न लेवै घेर॥

छण छण जागरूक ही र'वै, र'वै म्रित्यु रो ध्यान।
सा[illegible] सूं र'वै, हुवै घणो कल्याण॥

जीवन जीणै री कला, सुद्ध धरम संयोग।
म्रित्यू मरणै री कला, बिपस्सना रै जोग॥

जनम मरण रै रोग री, ओसध मिली अमोल।
धन्य बुद्धजी जगत नै, इमरत दीन्यो घोल॥

मेसर्स मोतीलाल बनारसीदास
बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११० ००७
की मंगल कामनाओं सहित

विपश्यना विशोधन विन्यास के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३. दूरभाष ८६
श्रावण पूर्णिमा * मुद्रण स्थान : विपश्यना प्रेस, धम्मगिरि, इगतपुरी. दूरभाष : ७६, १७६ * August 87

वार्षिक शुल्क रु. १०/–
आजीवन शुल्क रु. १००/–

'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71
पोस्टल रजि. नं. NS(M) 16/87

Licence No. NS 18
to post without prepayment

प्रेषक :
विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी–४२२ ४०३
(जि. नासिक, महाराष्ट्र, मध्य रेल्वे)